# आपातकाल में सृजन फुलवारी

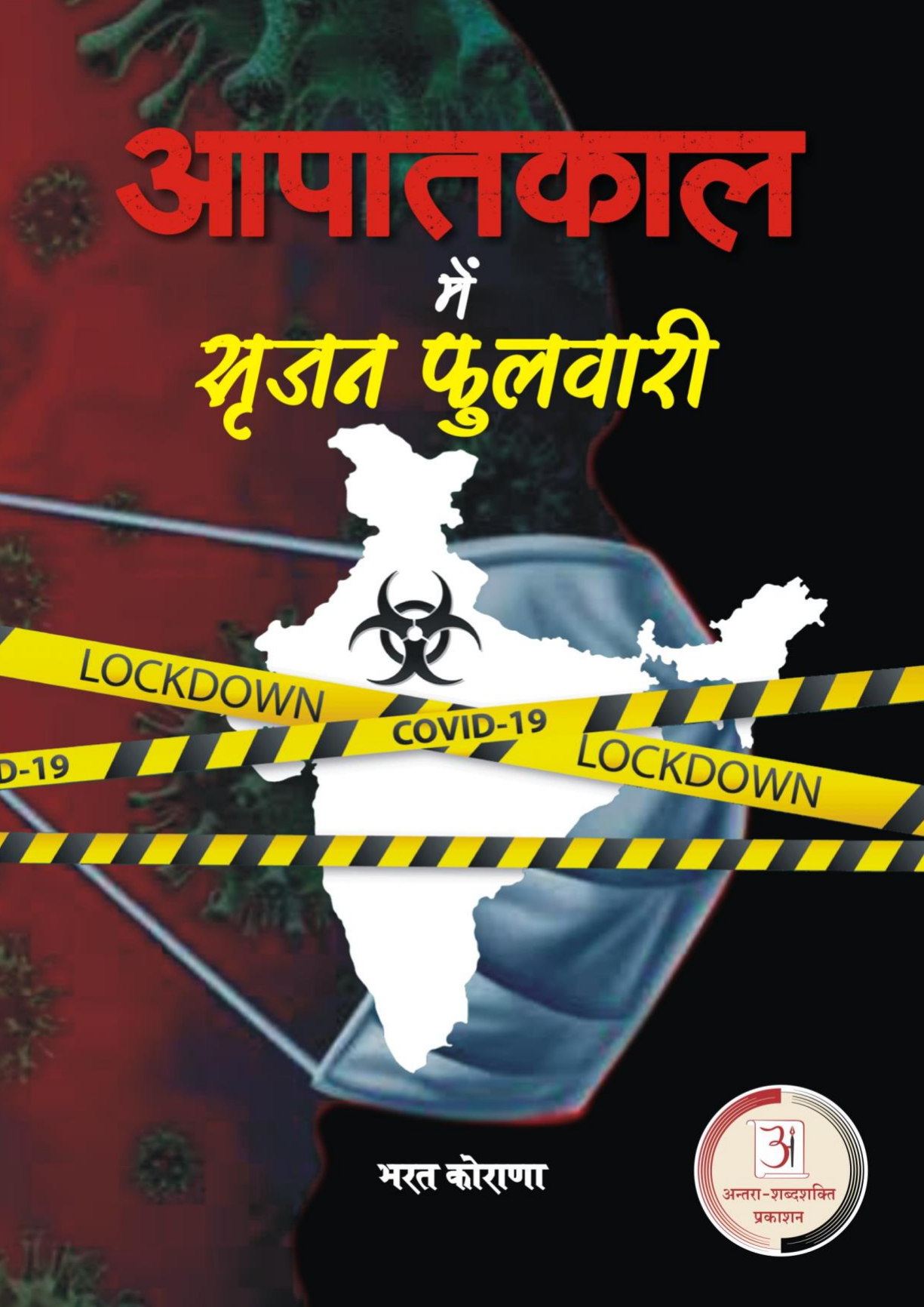


भरत कोराणा

अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन

# आपातकाल में सृजन फुलवारी

भरत कोराणा

अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन
वारासिवनी, मध्यप्रदेश

978-93-5372-221-0

संपादक- डॉ. प्रीति समकित सुराना
तकनीकी संपादक एवं आवरण चित्र- संदीप कुमार सोनी, वारासिवनी
मुख्य कार्यालय- 15 नेहरू चौक, वारासिवनी, जिला बालाघाट (म.प्र.) 481331
दूरभाष- (कार्या.) 07633-253159
मोबाईल- 9424765259
ईमेल- antrashabdshakti@gmail.com
वेबसाईट- www-antrashabdshakti
प्रथम संस्करण- 2020, भरत कोराणा
मूल्य- 50.00 रूपये
मुद्रक- शैलू कम्प्यूटर्स, वारासिवनी

**THE BOOK WRITTEN BY BHARAT KORONA**

**वैधानिक चेतावनीः**- इस पुस्तक का सर्वाधिकार सुरक्षित है। लेखक की लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश को फोटोकॉपी एवं रिकार्डिंग सहित इलेक्ट्रोनिक अथवा मशीनी किसी भी माध्यम में अथवा संग्रहण और पुनर्प्रयोग की प्रणाली द्वारा किसी भी रूप में पुनरूत्पादित अथवा संचारित प्रसारित नहीं किया जा सकता है। प्रस्तुत पुस्तक की समस्त रचनाएँ लेखक द्वारा अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन को प्रेषित की गई है। अतः प्रत्येक रचना की मौलिकता के किसी भी दावे हेतु लेखक जिम्मेदार है। प्रस्तुत पुस्तक के घटनाक्रम पात्र, भाषाशैली एवं स्थान सभी लेखक की कल्पना है। किसी भी प्रकार के वाद-विवाद के लिए प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

# आपातकाल में सृजन फुलवारी

सादर नमन,

आज देश जिस भयावह स्थिति से गुजर रहां है उस स्थिति में देश का हर एक व्यक्ति या ये कहें कि विश्व का प्रत्येक मानव आर्थिक, मानसिक और शारीरिक रुप से व्यथित है। कोरोना (COVID19) जैसी महांमारी ने पूरे विश्व को नैराश्य के दौर में लाकर खड़ा कर दिया है।

ऐसे समय में जब हमें अनुशासित रहना है, सामाजिक दूरी बनाकर सीमित संसाधनों में जीना है, एकदम से अपनी दिनचर्या को बदलकर एकाकी जीवन यापन का अभ्यास करना है और मन में महांमारी की दशहत से होने वाली नकारात्मकता और निराशा को भी नियंत्रित करना है तब सबसे सही हल होता है खुद को रचनात्मकता से जोड़ लेना। जो व्यक्ति जिस कला से जुड़ा हो उसे मनः स्थिति के अनुरुप उसी कला में सृजनात्मक हो जाना चाहिए।

बस इसी विचार ने एक दिन प्रेरित किया कि अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन से जुड़े रचनाकारों को एक सृजनात्मक सरप्राइज दिया जाए।

अन्तरा शब्दशक्ति और जीवन के सहभागी प्रिय श्समकित सुरानाश् से परामर्श किया तो उन्होंने भी सहर्ष हांमी भर दी। मेरे संपादन के साथ तकनीकी संपादन की सारी जिम्मेदारी हमारे तकनीकि संपादक प्रिय "संदीप सोनी" ने ले ली और इक्यावन दिन के लॉकडाउन में एक साथ 111 किताबों का निःशुल्क ईसंस्करण तैयार किया जिसका मुद्रित संस्करण देश के परिस्थितियाँ सामान्य होते ही रचनाकारों की इच्छानुसार सशुल्क किया जा सकेगा।

अन्तरा शब्दशक्ति संस्था के सभी सदस्यों ने सृजन को हमेशा प्रेरित किया है जिसके लिए मैं सभी की हृदय से आभारी हूँ।

आपातकाल में कुछ न करने की सजा को कुछ करके खत्म करने में सहयोगी बने समकित, संदीप-टीना सोनी, बच्चों और पूरे परिवार की आभारी हूँ जिन्होंने हर पल मुझे मजबूत बनाए रखा।

आशा है ये सरप्राइज सभी रचनाकारों को उत्साहित करेगा और पाठकों को हमारा यह प्रयास पसंद आएगा। हमें प्रतिक्रियाओं की प्रतीक्षा रहेगी।

सादर आभार

संस्थापक एवं संपादक
अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन
एवं पंजीकृत संस्था
डॉ प्रीति समकित सुराना

# अनुक्रमणिका


| | | |
|---|---|---|
| 1. | मैं शहर हूँ | 6 |
| 2. | हमतुम- | 7 |
| 3. | सिपाही का संघर्ष | 8 |
| 4. | अर्थव्यवस्था | 9 |
| 5. | माँ | 10 |
| 6. | कृष्ण मंजरी | 11 |
| 7. | प्रेम अनुभूति | 12 |
| 8. | मैं खाकी हूँ! | 13 |
| 9. | हुक्मरान | 14 |
| 10. | मोह | 15 |
| 11. | राजकुमार | 16 |
| 12. | घूंघट | 17 |
| 13. | एक नजर | 18 |
| 14. | फिर मैं आईना कहां? | 19 |
| 15. | मैं शहर हूँ | 20 |
| 16. | हमतुम- | 21 |

# मंजिल ही एक ठिकाना है

एक बात अब जो गढ़नी है
मंजिल बिन तो सब सूना है
सुने सब अब मन के तंतु
गर मन में एक जिद नयी है।।

जिद वही जो मंजिल हित हो
जो लाये खुशहाली घर में
जो फैला दे जगमग आभा
मेरे, तेरे, उसके घर में।।

भाई को भाई माने हम
हर मानव से प्रेम करे हम
नहीं रखे हम स्वार्थ वासना
ताकि मंजिल निकट हो जाए।।

अपने कर्म अपने कायदे
मानों तब ही तो है फायदे
वरना केवल बातें कोरी
नहीं भली है और नहीं भलाई।।

मंजिल क्या है जीते सपने
मंजिल है अरमां की खेती
मंजिल है अपनों का सुख हित
मंजिल पानी बहुत जरूरी।।

देश जूझ रहां आज रुपये से
रुपयों की तंगी आ गयी है
कुछ तो बुनों नये सपने जो
मंजिल हित हो अपने-अपने।।

कर्म खेत में बीज मेहनत हो
प्रेम नीर की हो सिचांई
खलिहानो में अपनापन आये
ताकि मंजिल बनें ठिकाना।।

आओ मिलजुल हाथ थाम ले
मैं से आज सब हम हो जायें
नहीं रखें हम कोई मलीनता
ताकि मंजिल सुखद हो जाए।।

सुंदर सपने सफल बनाये
जिससे महके घर आँगन सब
सुंदर बनें छवि निराली
तो मंजिल ही बने ठिकाना।।

# कोरोना दिनों का फेर

मैं गरीब था जनाब
कोसों तक राह पर
तलवे फोड़ते गाँव आया
यह दिनों का फेर था।
हम बैठें है
चिड़ियाघर के
उदास हाथी की तरह
जिसे बाँस नही मिल रहा।

कितनी मुद्दते धन जोड़ा था
पाई-पाई करके
सोचा था
इस सर्दी मे
बाबा की बंडी बनाऊंगा
पर समय की मार
महंगाई डायन ने छिन लिया धन।

यही भी सोचा की
माँ को कांच वाली चूड़ियाँ
बहुत भाती है मखमली सालू के साथ
जब रखूँगा एक साथ
आँचल में माँ के
मखमली सालू और कांच वाली चूड़ियाँ
तब कितनी खुश होगी वो बूढ़ी अंगुलिया।

पर सब ख्वाब मिट गए
जैसे आकाश में इंद्रधनुष हो।
क्योंकि यह दिनों का फेर था।

# मैं शहर हूँ

जलती अंगुलिया
उखड़ते नाखून
ताजा दुख
छटपटता देखा है
सुनसान गलियों में
क्यूंकि
मैं शहर हूँ।

कभी जल जाता हूँ
भाईचारे के द्वेष में
कभी कराह कर
थूकता हूँ तुम्हारे
मानसिक असंतुलन पर
कि आजाद हुए बरसों हुए
पर सच में गुलाम हो तुम
मैं शहर हूँ।

कई बार ताज्जुब करता हूँ
नन्ही कली को
कैसे छोड़ देते हो असहाय
फिर देते मूंछों पर ताव
तुम्हे शर्म नही आती
कन्या वध ब्रह्म हत्या है?
मैं शहर हूँ।

मैंने देखा है कई बार
तुम इंसानों का असुर बनकर
वासना में जिस्म का खाना
तब दहाड़ मार कर रोता हूँ
तुम्हारे असभ्य होने के सबूतों पर।

# हम-तुम

जब खामोशी
गा रही थी प्रणय वेदना
तब हम-तुम
हाथ थाम
निगाहें मिला सोच रहे थे।
कि ये पुराना पीपल
और इसके पीले पत्ते
कितने गवाह है
हमारे हम-तुम होने का।
जब गीली बजरी के
टीले पर हम-तुम
बैठे मौन साधते साधु बन
अनायास ही फेकते कंकड़
किनारे तक।
तब बहुत बार
गवाह बन जाते वो सुहाने तट
जी प्रमाण पत्र थे
हमारे हम-तुम होने का।
जब तारे बिंदु बन मंडरा जाते
सुहानी रातों में
तब केवल
हम-तुम जग कर देखते थे।

# सिपाही का संघर्ष

मुसीबतें क्या हैं?
जाकर देखो,
एक दिन बिताकर देखो,
ऊंचे-ऊंचे हिम के टीले,
बर्फीली हवा नाग का दंश,
झकझोर देती है हमें।
केवल तन को, मन को नहीं,
मानता हूँ बाधाएँ मुँह फाड़े
खड़ी,
पर जहर नहीं,
जो मर जाऊंगा मैं।
मुझे जीना है, जिद से,
वतन के लिए,
राह देख रही है,
गांव की गलियां,
मा का सपना,
पिता का अरमान,
दोस्तों की ख्वाहिश,
शाला की दीवार,
बहनों की राखी,
पत्नी का सिंदूर,
भाई की शिक्षा,
छोटी की चुटिया,
दादा की लाठी,
दादी की माला,
मन्दिर की पूजा,
बचपन की यादें,
जवानी का जुनून,
बाबा कि उम्मीद,
बिटिया की आशा,
चौखट की सौगन्ध,
दचलीज की दस्तक,
दे रहा है आवाज,
सरहद का परिंदा,
इसलिए आज मैं,
गुरूर, रुतबे, हिम्मत से,
डटा हूँ रायफल के साथ।
न खुद से, न दुश्मन से,
न ही बर्फीली हवा से,
हारता हूँ कभी,
क्योंकि सितारों वाली,
सेना की वर्दी,
पहने बदन पर जोश से,
ताक रहा हूँ सरहद।
नस-नस मे जाड़ा,
बदल रहा है करवट,
जूतों तक को,
आफताब मयस्सर नही,
हिम् की चोटी,
आँखों के आगे,
संगीन हाथ का,
लपलपाती जीभ से,
दुश्मन के खून का प्यासा,
कर रहा है इंतजार,
मेरा भी खून,
मार रहा है उबाल,
जीना है जिद से,
अंतिम क़तरे तक,
वतन की हिफाजत,
तिरंगे के मान के लिए।।

# अर्थव्यवस्था

रोती सड़के सुनसान चौराहे
खाली शाला राह देखती
मजदूरी के लाले पड़ गए
हालत सबकी खस्ता हो गई।

पगड़ी आज टंगी पड़ी है
महावर हाथ नहीं रचती है
बन्द पड़ी है आज हथाई
अर्थ व्यवस्था बिखरी हुई है।

मंदिर की टुन-टुन वो घण्टी
स्वर सुर नही गा रही है
मदिरालय तो हो गए मंदिर
भीड़ उस कारण बड़ी चली है।

मौन हो गए हसी तमाशे
मौन हो गई मल्हार पुरानी
मौन हो गयी आज लावणी
आफत सब पर आ पड़ी है।

भीड़ पड़ी तो घर याद आया
याद आई खलिहांनो की
याद आई आँखो में सबके
बाबा की वो सीख पुरानी।

गूंगी हो गई है सब दुकानें
जैसे कोई विरह गा रही
सुनी है महाजन की कोठी
धन की कैसी विपदा आई।

खाली हो गई जेब भरी जो
खाली बटुआ खाली पेटी
जोड़ी थी पाई पाई जो
नही बची है एक भी भाई।

कैसा आ गया समय भय का
मानव से मानव डरता है
जहाँ कभी थे बन्द पिंजरे
आज वो सुख भोग रहे है।

रुपया के आँखो मे पानी
कैसी आ गयी विपदा भारी
कैसी हस्ती कैसी अमीरी
सबकी हालत खस्ता हो गई।

बन्द पड़ी है चिमनी ऊँची
बन्द पड़ी वो बड़ी फेक्ट्री
बन्द पड़ा रेलों का कलरव
बन्द पड़ा मेहनतकश सारा।

अरे विधाता आज मिटा दे
रुपये की दशा बेचारी
क्या से पल मे क्या हो गया है
अर्थव्यवस्था खस्ता हाल है।

# माँ

माँ
दुनिया का अनमोल शब्द
जिसका सानी कोई नहीं।
दुख की ढ़ाल, सुख का छाता
दोपहरी का निवाला
जिसका सानी कोई नहीं।

कितनी बरखा की रातों में
रात गुजारी खुली आँखों में
कई बार वो औषध बन गई
कई बार बनी वो दवाई
जिसका सानी कोई नहीं।

नव मासों की तप का पुतला
जिसमें मेरा पिंजर साधा
डगर राह में हर दम सजोया
जैसे मंथन का अमृत हो
जिसका सानी कोई नहीं।

मेरी तुलसी बनी माँ तो
कभी रहीम की साध बनी
कभी कबीर की बोली बन
जीवन पथ का पाठ पढाया
जिसका सानी कोई नहीं।

माँ घर चौखट का नमूना
माँ ईश्वर का है मुखोटा
माँ हर राह का पाथेय है
माँ जगत की है वो अम्बा
जिसका सानी कोई नहीं।

# कृष्ण मंजरी

कुंजलता और शीतल समीर थी
वासंती कुसूमों की आहट
बेल-बेल प्रफुल्लित थी
कन्हा जब तुमने राग सुनाई।

था स्नेह प्रेम का शब्दकोश
मंजरी का शील निराला था
जब गोधूलि में गोपों संग
गोकुल में तान सुनाई थी।

माखनचोर छवि बनी अनोखी
वलरी पर प्रेम घटा बरसी
सुधा मति में बनी अनोखी
कान्हा अपनी बान पुरानी।

तुम अल्हड़ मादक रूप बने
हृदय पटल पर उतरे थे
चंचल छवि हित दर्शन को
हम अपने कर्मो को भूले थे।

तुम मोहन हो नटवर नागर
तुम गिरिधर के गुणगान हो
तुम प्रेम साधना मूर्ति हो
तुम अपना प्रेम चिरन्तन हो।

# प्रेम अनुभूति

जब जिल्द पर अनायास
जाते हाथ थम जाते है
कृष्ण की रास भरी कुंडली चित्र पर
तब मुझे आभास होती है प्रेम अनुभूति।
प्रेम देह का जुड़ना नही
बल्कि प्रेम साक्षी है
हर रिश्ते की अभिव्यक्ति का
जिसका प्रमाण है
शबरी के झूठे बेर
केवट का राम हित जतन करना।
प्रेम दर्शन है
प्रेम प्रदर्शन नही
प्रेम नही सीखता
बेटियों पर तेजाब फ़ेकना
अपितु प्रेम कहता है
अर्धांगिनी हित मजबूत बन
विश्व विजेता मेरिकॉम बनाना।
मैं प्रेम अनुभूति करता हूँ
आत्मा के केंद्र बिंदु से
जो तिलान्जलि देकर तम की
मुझे हवाले करती है सत् को।
जब कभी अकेले में पढ़ता हूँ
मीरा का विरह
तो बोलती संवेदना
मुझे प्रेम अनुभूति की लहरों मे डुबकी हेतु
मेरे व्यक्तित्व को आमन्त्रित करती है।

# मैं खाकी हूँ!

सर्दी गर्मी बरखा झेली
रात गुजरी सुनी गलियों में
पल पल आँखे खुलती रहती
आहट पर चौकन्ना रहता
बहूँत दिनों से बाकी हूँ,
हां! मैं खाकी हूँ।

वर्दी का वाघाम्बर ओढ़े
हांथ बाँस की लाठी झेले
फीतों मे पैरो को डाले
चला पड़ा हूँ यायावर बनकर
ईमान धेर्य की फांकी हूँ,
हां! मैं खाकी हूँ।

आगे साहब पीछे मेरा रेला
साहब साहब करते दिन भर
खड़ा खड़ा करता रखवाली
धर्म हिम्मत का हाँकी हूँ,
हां! मैं खाकी हूँ।

बना संतरी करता दिनभर
पापों की गिनती निगरानी
आँख लगी तो आये बोले
फला गली मे लूट हुई है
नींद को रख एक तरफ मैं
झटपट से वर्दी को पहने
आ खड़ा उस मोहल्ले में
लोग कहे यह लेट लतीफी
घावों की मैं टाकी हूँ,
हां! मैं खाकी हूँ।

वेतन मे मिलती मजदूरी
केवल फीकी की दाल ही आती
दाल भात तो होली दिवाली
मेरे घर नही बनते हर दिन
मेहनत का पाकी हूँ,
हां! मैं खाकी हूँ।

निकला घर से सब जन बोले
बिटिया बोली जल्दी आना
बीवी बोली जल्दी आना
बापू बोले जल्दी आना
माँ भी बोली जल्दी आना
अफसर बोले काम बहुत है
आज तुम्हें है देर से जाना
ड्यूटी का मैं साकी हूँ,
हां! मैं खाकी हूँ।

अरमानों का साथ भी छोड़ा
सपनों को थानों मे घोला
जीपों की पिछली सीटों पर
कितनी बार मैंने खुद को तोला
अभी जाना है दूर तलक तक
सपनों का गायकी हूँ,
हां! मैं खाकी हूँ।

मेहनत करती दिनभर वर्दी
आग दंगो मे खड़ी है वर्दी
लाशों को भी लिए है वर्दी
ना देखी मैंने सर्दी गर्मी
इंसानियत की आशिकी हूँ,
हां! मैं खाकी हूँ।

फर्ज बड़ा है मेरा जनता
सुख से घर मे रहे सब जनता
प्रेम शांति रखे सब जनता
अपनापन का पाठ पढाता
माँ बहनों की राखी हूँ,
हां! मैं खाकी हूँ।।

# हुक्मरान

विकृत मानसिकता,
हिंसक व्यहवार,
बदलता नजरिया,
कृतघ्नता के चिन्ह,
कोख में पलता आडम्बर,
फ़रेब और जाल।
धूं-धूं करता बुझता,
इन्सानियत का चिराग,
तुगलकी फरमान,
बादशाही आदेश,
नंदवंशी माहौल,
तानशाही अंदाज,
फैलती साजिशें।
सब देख रही है प्रजा,
हुक्मरानों!
तुम निराला का गुलाब,
फलतः जनता है कुकरमुत्ता।
तुम रावण का दर्प,
दुर्योधन का दम्भी हठ,
शकुनि की चाल, इंद्र का छल,
मरीचि का प्रपंच, कंश की
दुष्टता,
शिशुपाल की मक्कारी।
जनता मूक सी सही,
पर कर रही है लेखा-जोखा,
तुम्हारे उदण्ड व्यवहार का,
बदलते परिवेश का,
साजिशों की बू का,
फरेबों के पासों का,
छल के सांचो का।
शायद भूल रहे हो कुछ,
जनता ने तख्त बदल दिये,
यद्धपि मेरी कलम
शायद तुम्हे यकीन नहीं,
तो इतिहास उठाओ,
भरे पड़े है पन्ने,
कदम कदम पर मिल जायेगा
तुम्हे प्रमाण इस परिणाम का।
इतिहास झूठ नहीं बोलता,
सब समेट लेता है अपने अंदर,
अच्छा-बुरा, न्याय-अन्याय,
सगुण-निर्गुण, छल-कपट,
दम्भ-दर्प।
बदला परिवेश देगा छाप,
तुम्हारे व्यक्तिव की समीक्षा
हेतु,
तुम्हारे नजरिये पर टिप्पणी
हेतु,
तुम्हारे असंगत फरमानों हेतु।
अब वक्त भी कहां,
सब बदल गया है,
जनता माफ करेगी कैसे?
तुम्हारे मन, वचन, कर्म,
सब चढ़ गए हैं भेंट,
अंहकार के हाथों।

# मोह

अहां! भंगिमा मौन साधती
साधक मन में गोते लेता
बड़ा चला मन में मोह।

अंतरतम आहत आकुल
देख रहे दरख़्त के पन्ने
बड़ा चला है मन में मोह।

सज्जन व्यथित भया निराला
व्यथित कुंठित रहता दिन भर
बड़ा चला है मन में मोह।

सरकारी कुर्सी पर घोंघे
चाट रहे भोले के कागज
बड़ा चला है मन में मोह।

मजदूरी खाई खाते से
खाते भी खा गए चोर
बड़ा चला है मन में मोह।

बैलों की गोईया भी बिक गयी
बनिया दूना करता सूद
बड़ा चला है मन में मोह।

राज पाट निष्ठुर बन बैठा
गरीबों को वो गरल पिलाता
बड़ा चला है मन में मोह।

लोकतंत्र के नाम दिखावा
मजदूरी में मरे मजदूर
बड़ा चला है मन में मोह।

# राजकुमार

खबर पड़ी कानों मे
सूखी रोटियाँ हरी रही पटरियों
पर
मगर सूख गए जिंदा जो थे
गरीबी की लंबी चादर ओढ़े।
कुर्सी तक बात आई की
बला हांललात ने हलाल कर दिया
बेताज तलवे फूटे मजदूरों के
मगर सब मोमबत्तियां मौन है।

धरती जागती रही रात भर
लाशों को अपने आँचल मे लेकर
पर वे पहुँच गए रसातल।
शायद मतपेटी की गर्मी नही थी
उनके जिस्मों में केवल अस्थि
पञ्जर ही था
वरना भीगी आँखे लेकर
रोने वाले नेता ढाँढस देने आते।

वे डूबते सूरज की अंतिम किरण
देख
बेहाल सो रहे थे
सुराज को वक्ष में लपेटे।
गर्म करवटें तो
घास पट्टियों में बदन बढ़ाये
साहूकारों को मुबारक
जिन्हे विशाल में सूक्ष्म भान
होता है हरपल।

अंगूठे से निकलती पीप सख्त
कर गयी
तुम्हारे नवनिर्माण के अधकचरे
अरमानों को
जो महज एक मरीचिका है।

पर मैं कुमार नही राजकुमार हूँ
गिनती रखता हूँ
इतिहास के हर काले पन्ने की
जो साक्षी हैं सरकार के छलावे
की।

वरना लोकतन्त्र में
कुत्ता भी मारना अपराध है
फिर वे तो घर की सत्रह लाठियां
थी।
आज देख रहा हूँ कृष्ण की नजर
तुम शिशुपाल बन
कितने पाप और करोगे?
अंतिम पाप पर मैं नही माफ़
करूँगा।

क्यूंकि मैं राजकुमार हूँ
जो केवल न्याय हित जीता है।
हिफाजत जिनको
चौखट तक जाने की नही मिली
तो तुम क्या कर रहे थे
जम्प खाते गद्दों पर बैठने वाले
मुस्टंडों।

इधर मेरे राजतिलक की
तैयारी होगी
और उधर जुल्मों के कंगूरे
या तो कर देंगे आत्म समर्पण
वरना विप्र की संतान
तुम्हारी हर गलती पर
प्रहार करेगा अपने परशु से।

क्यूंकि मैं नेता नही
अपितु राजकुमार हूँ हेमपुत्र।

# घूंघट

घूंघट क्या है?
लाज धरम का नेजा
जिसको ऊँचा रखने पर
श्रद्धा बढ़ती है लोगों की।

घूंघट एक संकुचित दायरा
जिसके अंदर लिखे होते हैं
औरत के हृदय के उफनते ज्वार भाटे
जो उठते गिरते हिलोर छोड़ते हैं
हृदय तक महिला के।

घूंघट सदियों से बना नासूर
जो व्याधि व्यथा बना
व्रण है औरत के नाम
जिसकी औषध है प्यार
महिला के हिस्से लिखना।

कितनी मर्यादा के नाम बना
घूंघट का कीर्ति स्तम्भ
जो केवल साक्षी है रूढ़ि का
जिसने केवल छला है
नारी के हक को।

जब चार इंच का मास्क भी
लगता है घुटन पुरुष के मुख
तो चार फिट का घूंघट
कहां उचित है नारी के तन।

छि:!
यह मर्यादा नहीं
अपितु लक्ष्मण रेखा है
औरत के नामसदियों से आती
लाज का प्रमाण पत्र बनी।

जब नहीं चाह कि मैं, तुम,
आप, हम,
जो प्रधान मानते है
खुद को समाज पुरुष बने रह
सके पर्दे में,
फिर महिला के नाम
घूंघट का तोहफा मायावी है।

गवाह है
रामायण महाभारत
वेद पुराण उपनिषद के महिला
पात्र
जिनके मुख पर घूंघट तो नहीं
था
फिर आज की देवी घूंघट में
क्यों रहे?

# एक नजर

कितने रावण
जलते देखे
बुझते देखे
खुद में
तुझ में
हा हा, ही ही
रोते गाते
फफक फफक
सिसकियाँ लेते,
कितने रावण
एक नजर में
आज गाव में
निकलते देखे।
उत्तर में महांकाय सा
भुक् भुक् करता
दसन निपोरे
कर पाखण्ड
पाखंडी माला
एक दूजे को
वो गले लगाता।
गले लगाकर
चित्त मे उसके
दंगो का एक दबा दुप्पटा
दबा बड़ा

वो पड़ा दुप्पटा
कुचालों से
एक नजर में
हर चौराहे
फलता देखा।
वाम दिशा का
बड़ा विषैला
डगमग डगमग
डगता डग भरता
जा रहा वो अंधमोह से
काल जाल का
गरल घड़ा ले
नन्हों को
बहला फुसला कर
आ रहा वो
जहर पिलाने।
एक इधर खड़ा
एक उधर खड़ा
एक नजर में
कितने रावण
गली-गली
शोक बांटते
मुस्काते मतवाले रावण
सूने पड़े मोहल्ले देखे।

# फिर मैं आईना कहां?

अगर ना दिखा पाया
तुम्हारे चेहरे के दाग़
तो फिर मैं आईना कहां?

उजले चेहरों के ऊपर,
बल खाती मुंछो के पीछे,
अगर बता ना पाया राज,
तो फिर मैं आईना कहां?

फबती खादी की सफेद सलवटे,
कड़े जूतों की चरक सू,
बढ़ते कदमों की आहट का,
बता न पाया बात,
तो फिर मैं आईना कहां?

मजबूत कंधो के सूखे आंसू,
सूखे आंसू के मजबूत सुख,
अगर बता न पाया मैं,
तो फिर मैं आईना कहां?

थरथाते होठों पर भी,
कभी तो आई थी मुस्कान,
अगर उन होठों का,
लिख न पाया अहसास मैं,
तो फिर मैं आईना कहां?

रोज सवेरे मेरे आगे,
वो भरती थी अक्सर लाली,
अक्सर शाम होने से पहले,
अगर लाली फैलने के बाद,
बता न पाया
लाली का लाज,
तो फिर मैं आईना कहां?

उस बूढ़े दरख़्त के पीले पत्ते,
बेमौसम हो गए है दूर,
अब पिरो न पाया,
बूढ़े दरख़्त की तड़प,
तो फिर मैं आईना कहां?

मेरे कोने मैं भी थी,
कभी तो
एक स्याह गर्द,
उन कोनों का भी,
अगर दिखा न पाया मैल,
तो फिर मैं आईना कहां?

**हिन्द व हिन्दी का सम्मान**
**है प्रमाण देशभक्ति का**
**आइए करें**
**सृजन शब्द से शक्ति का**

रचनाकार

**भरत कोराणा**

मुकाम- कोराणा, पोस्ट- सुगालिया जोधा
तहसील- आहोर, जिला- जालौर
राजस्थान- ३०७०२६

Email- bkkorana@gmail.com

9414385545


जब देश में आदरणीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र दामोदर दास मोदी द्वारा एक बड़ा फैसला लेकर लॉकडाउन की घोषणा की गई तब जहन में बहुत से सवाल उमड़ रहे थे जिसमें तह में एक बड़ा सवाल जिंदा था अर्थव्यवस्था से परे शीर्ष पर भारतीय हित। इतिहास गवाह है की जब भी किसी ने दृढ़ इच्छा शक्ति से कोई कार्य किया है तब सफलता हासिल होती है।

इस समय निराशा के माहौल में हिम्मत से काम लेकर सबको आशावादी बनाना है। हमारी लेखनी, सोच, प्रयास, सहयोग सब सकरात्मक हो एवम मजबूत हिंदुस्तान को बनाने में अनवरत प्रयासरत रहे। ऐसी ही सोच लेकर डॉ.प्रीति सुराना जी इस मुहिम को चला रही है जिनका मै हृदय से साधुवाद ज्ञापित करता हुँ।

इस वैश्विक संकट में कोरोना हारेगा और हम जीतेंगे।


पं.क्र. (04/21/05/207665/19)
अन्तरा शब्दशक्ति
www.antrashabdshakti.com

15, नेहरु चौक, मेन रोड वारासिवनी, जिला- बालाघाट (म.प्र.), पिन 481331
संपर्क- 9424765259, अणुडाकः antrashabdshakti@gmail.com

978-93-5372-221-0

मूल्य 50/-

अन्तरा शब्दशक्ति के लिंक्स
Website:- www.antrashabdshakti.com
Facebook page:- https://www.facebook.com/antrashabdshakti/
Fecbook group:- https://www.facebook.com/groups/antraashabdshakti/